Indian J. Soc. & Pol. 05(I):2018:117-120 Special Issue **ISSN : 2348-0084(PRINT)**
UGC List No. 47956 **ISSN: 2455-2127(ONLINE)**

भारत में मानवाधिकार की परिकल्पना एवं वास्तविक प्रासंगिता

रंजनी कुमारी सिंह[1a]
[a]असिस्टेंट प्रोफेसर, बी0एड0, संत कोलम्बियाज कालेज, हजारीबाग, झारखण्ड, भारत

ABSTRACT

मानवाधिकार प्रत्येक मनुष्य के लिए उसके समाजिक वातावरण के स्वस्थ्य दृष्टिकोण के विकास हेतु महत्वूपर्ण अधिकार है। यह अधिकार हमें जन्म से प्राप्त है इसलिए इसकी प्राप्ति में जाति, धर्म, लिंग, भाषा, रंग, राष्ट्रीयता बाधक नहीं है। ये हमारे नैसर्गिक अधिकार है और इन अधिकारों का हनन ना हो एसी स्थिति में राज्य से मानवाधिकार अपेक्षा रखता है कि निर्माता होने के साथ–साथ संरक्षक भी रहे। ज्ञातव्य है कि मानवाधिकारों को पहचान देने और इन अधिकारों के अस्तित्व सशक्त करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र चार्टर के आधार पर 10 दिसम्बर को अंतराष्ट्रीय मानवाधिकार दिवस मनाया जाता है। मानवता के खिलापफ होने वाले अत्याचार को रोकने और उसके विरूध संघर्ष को नया आयाम देने के लिए 12 अक्टुबर 1993 को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को गठित किया गया। इसके साथ ही मौलिक अधिकार तथा राज्य के नीति निर्देशक तत्त्वों में इन्हें शामिल भी किया गया। भारतीय न्यायालयों द्वारा मानवाधिकारों की सक्रिय एवं रक्षा करने की बात भी की गयी है, लेकिन वर्तमान में हमारे देश में मानवाधिकारों की स्थिति वास्तव में जटिलता का रूप ले चुकी है, यद्यपि दक्षिण एशिया के अन्य देशों के भांति भारत में चिंताजनक स्थिति नहीं है, लेकिन देखा जाए तो आज भी भारत में एक खास वर्ग के लोगों को ही यह अधिकार प्राप्त होते आए हैं। मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तरप्रदेश आदि राज्यों में साक्षरता का स्तर कम है, वहाँ यह समस्या अधिक है। पुलिस की यातना, गरीब, पिछड़े वर्ग के अमानवीय तरीके से कानूनी कार्यवाही, महिलाओं के शारिरिक प्रताड़ना, घरेलू हिंसा, भ्रुण हत्या जैसे उदाहरण हमारे देश में परिलक्षित है और ये मानवाधिकार को शर्मशार कर रहे हैं। अतः मानवाधिकार की परिकल्पना एवं प्रासंगिता में द्वंद की स्थिति व्याप्त है। सूखा, बाढ़, भूकम्प, गरीबी, अकाल, प्राकृतिक आपदाओं से लोगों के जीवन को सुरक्षित करना यह मानवाधिकार की महत्ता को स्पष्ट करता है और इसके लिए सरकार की सजगता आवश्यक है।

***KEYWORDS**: मानवाधिकार, आतंकवाद, नक्सलवाद, परिकल्पना, सार्थकता*

मानवाधिकार वस्तुतः वे अधिकार है, जो प्रत्येक मनुष्य को केवल और केवल इस आधार पर मिलना चाहिए क्योंकि वे मनुष्य हैं। Every man has right to life वास्तव में इन्हें 'बहुधा', 'मूल' अथवा मौलिक अधिकार भी कहा जाता है। आज विश्व का कोई भी राज्य ऐसा नहीं है जो किसी न किसी रूप में इन अधिकारों को मान्यता नहीं दिया अर्थात् विश्व के समस्त राज्यों ने इन अधिकारों को मान्यता प्रदान किया हैं संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अन्तर्गत भी मानव अधिकारों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

वर्तमान समय में विश्व में मानवाधिकारों के मामले पर बहुत अधिक जोर दिया जा रहा है। यह एक अहम् मुद्दा बन चुका है जिसे किसी भी परिस्थिति में नकारा नहीं जा सकता है। यक्ष प्रश्न जो उपस्थित है कि यह बात उठी क्यों? इन प्रश्नों के मूल तथ्य में केवल मनुष्य होना ही समस्त अधिकारों को प्रदान करता है। आज देखा जा सकता है कि विश्व के समस्त राज्यों, संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर सभी जगह इन्हें स्थान प्रदान किया गया है। संयुक्त राष्ट्र संघ का तो यह महत्वपूर्ण उद्देश्य ही है कि वह मानव अधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रता को जाति, भाषा, लिंग, धर्म आदि के भेदभाव के बिना प्रोत्साहित करें। आर्टिकल– 55 के अनुसार 10 दिसम्बर 1948 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने मानवीय अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा को पारित किया। इसी कारण 1950 में संयुक्त राष्ट्र की सभा ने 10 दिसम्बर को 'विश्व मानवाधिकार दिवस' के रूप में मनाने का निर्णय लिया। तबसे 10 दिसम्बर प्रतिवर्ष विश्व में 'मानवाधिकार दिवस' के रूप में मनाया जा रहा है।

मानवाधिकार की अंतर्राष्ट्रीय घोषणा के तहत निम्न अधिकार समाहित हैं–

1) वाक स्वतंत्रता का अधिकार।
2) न्यायिक उपचार का अधिकार।
3) सरकार की भागीदारी का अधिकार।
4) काम का अधिकार।
5) स्तरीय जीवन जीने का अधिकार।
6) शिक्षा का अधिकार।
7) समान काम के लिए समान वेतन का अधिकार।
8) सामाजिक सुरक्षा का अधिकार।
9) जीवन, सुरक्षा एवं स्वतंत्रता का अधिकार।
10) मनमानी ढंग से गिरफ्तारी के विरूध अधिकार।
11) विचार, विवेक एवं धार्मिक स्वतंत्रता।
12) निष्पक्ष एवं स्वतंत्र न्यायिक सुनवाई का अधिकार।
13) शांतिपूर्ण सभा संगोष्ठी करने तथा संघ बनाने का अधिकार।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य :

1: Corresponding Author

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् संपूर्ण विश्व युद्ध की विनाश लीला से भलीभाँति परिचित ही नहीं हो चुका था बल्कि उससे उत्पन्न विनाशकारी दंश झेल भी रहा था। इसी के पश्चात् विश्वभर में चल रही अशांति के दंग से विश्व को निकालने तथा विश्वशांति की स्थापना के लिए 24 अक्टूबर 1945 को संयुक्त राष्ट्र संघ का निर्माण किया गया। वास्तव में उस समय की जनता युद्ध प्रकोप को नजदीक से देख चुकी थी इसलिए कदापि युद्ध नहीं चाहती थी। यही कारण था कि मानव अधिकारों की बात द्वितीय विश्व युद्ध के उपरांत जोर–जोर से उठी। परन्तु तत्कालीन राज्यों द्वारा इन अधिकारों पर ध्यान न देने के कारण ही गृहयुद्ध उत्पन्न होने लगा जिसके फलस्वरूप अब राज्यों का स्वरूप कल्याणकारी होने लगा। तीसरी दुनिया की दशा अत्यन्त खराब थी क्योंकि ये सभी नव–स्वतंत्र देश थे। संयुक्त राष्ट्र संघ जो एक अन्तर्राष्ट्रीय मंच के रूप में सामने आया वहाँ पर इन बातों को रखा गया ताकि कोई भी देश दूसरे देश के मामले में हस्तक्षेप न करे। साथ ही सभी देशों ने एक–दूसरे से वचन लिया कि वे एक–दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे संयुक्त राष्ट्र संघ की Economic Social Council को यह अधिकार प्रदान किया गया तथा वह यह प्रावधान किया गया कि वे मानवाधिकारों की स्थिति के विषय में आयोग नियुक्त कर सकती हैं। इस प्रावधान में 30 आर्टिकल है। आर्टिकल 1–30 में व्यक्ति के अधिकारों तथा कर्त्तव्यों का विवेचन है। इस संदर्भ में विश्व के सभी देशों में आश्वासन दिया कि वे मानवाधिकारों की अवहेलना नहीं करेंगे। अगर किसी देश में मानवाधिकारों का हनन हो रहा है या कोई देश किसी अन्य देश के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करता है तो संयुक्त राष्ट्र संघ के माध्यम से सभी राष्ट्र मिलकर उसके खिलापफ कार्यवाई करेंगे। इस तरह से कहा जा सकता है कि मानवाधिकारों के लक्ष्य को हासिल करने की कड़ी हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना का उद्देश्य बहुत ही नेक एवं महान था। आगामी कुछ ही वर्षों में मानवाधिकार महाशक्तियों की कूटनीतिक शस्त्र बन गया। द्वितीय विश्व युद्ध के उपरांत विश्व दो गुटों में बँट गया जिससे शीत युद्ध प्रारंभ हो गया। एक गुट का नेतृत्व अमेरिका तथा दूसरे गुट का नेतृत्व रूस कर रहा था। इस आपसी प्रतिद्वंदिता की मार को तीसरी दुनिया के समस्त देशों को भुगतना पड़ रहा था जो इनके द्वारा बिछाये गये शतरंज की बिसात के गोटी बन गये। भारत भी इससे अछूता नहीं रहा। वास्तव में मानवाधिकारों की अवहेलना को लेकर तथा उसको शस्त्र बनाकर दूसरे राज्यों के मामलों में हस्तक्षेप करना आम बात हो गयी जैसे 1956 में रसिया का हंगरी में हस्तक्षेप, 1956 में ही स्वेज नगर संकट को लेकर इंग्लैंड, प्रफांस, इजरायल द्वारा हस्तक्षेप, 1968 में रूस द्वारा चेकोस्लोवाकिया में हस्तक्षेप, 1962 में क्यूबा की अमेरिका नाकेबंदी, वियतनाम का मामला, गैनडा में अमेरिकी हस्तक्षेप अप्रैल 1986 में लीबिया पर अमेरिकी बमबारी इत्यादि अनगीनत सिलसिला जारी हो गया।

आज विश्व रूस के विखंडन के पश्चात् लगभग एक ध्रुवीय हो गया है तथा अमेरिका का एकछत्र राज्य हो गया है। अमेरिका द्वारा आर्थिक एवं सैनिक रूप से संपन्न राष्ट्रों को अपने साथ मिलाकर संयुक्त राष्ट्र संघ पर अपना पूरा प्रभाव जमा लिया है। विश्व की और भी संस्था पर भी इन्हीं महाशक्तियों का नियंत्रण है तथा इन संस्थाओं का प्रयोग ये देश अपनी इच्छानुसार कर रहे हैं। तीसरी दुनिया के देश इन महाशक्तियों द्वारा विश्वसंस्था के इच्छानुसार उपयोग करने के भार को सहने के लिए विवश है। इन महाशक्तियों को समझा जा सकता है कि अमेरिका ने ईराक के कुर्दों की स्वायत्तता को लेकर बमबारी की जबकि वहाँ अश्वेतों पर अत्याचार जारी है, पाँच–छः वर्ष पूर्व एक भारतीय लड़के को जिन्दा जला दिया गया परन्तु पूरा विश्व मौन रहा। चीन में थ्यानमेन चौक पर हजारों युवाओं को अपने अधिकारों का माँगने के कारण गोलियों से भून दिया गया, इजरायल की हालत भी किसी से छुपी नहीं है पर इन राज्यों के खिलाफ संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा कुछ नहीं किया गया। इसके अलावे अलावे अनगिनत उदाहरण है जो लगातार मानवाधिकारों की आड़ में इन महाशक्तियों द्वारा प्रयोग में लाए जा रहे हैं। कहने का आशय साफ है कि मानव अधिकारों का शस्त्र तीसरी दुनिया के देशों के लिए ज्यादा प्रभावी हैं।

शोध–पत्र के उद्देश्य :

1. इस शोध–पत्र का प्रथम उद्देश्य है मानवाधिकार के अर्थ तथा महत्त्व को स्पष्ट करना है।
2. दूसरा उद्देश्य इन अधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा के प्रति नागरिकों को जागरूक करना है।
3. तीसरा उद्देश्य भारत में मानवाधिकार की परिकल्पना को स्पष्ट करना है।
4. चौथा उद्देश्य इन अधिकारों की रक्षा के प्रति भारतीय न्यायलयों के सजगता को स्पष्ट करना है।
5. पांचवाँ उद्देश्य इन अधिकारों के संदर्भ में असमानता को स्पष्ट करना है।

साहित्य की समीक्षा :

मानवाधिकार के संदर्भ में विविध विद्वानों द्वारा निम्नवत रूप से समीक्षा की गई है–

शम्सी (2004) ने मानवाधिकार के हनन की चर्चा प्रत्येक क्षेत्र में की है। यह क्षेत्र आंतरिक एवं वाह्य दोनों रूप में है।

नारयण (2005) ने गरीबी के संदर्भ ने चर्चा की और इसे मानवाधिकार के हनन का आधार माना।

शर्मा (2002) ने सम्पूर्ण सभ्यता के हनन के संदर्भ में मानवाधिकार की बात की है।

कार्तिकेय (2005) ने विविध रूपों में मानवाधिकार के हनन की बात की है। जैसे आंतकवाद, गरीबी, जातिय लिंग भेद बाल अपराध, घरेलू हिंसा। साथ ही पुलिस को इसके लिए संरक्षक माना है।

स्टीफन (2002) ने मानवाधिकार की रक्षा के लिए संपूर्ण मानवजाति को आगे बढ़ने की अपील की है ताकि उनके व्यक्तिव की रक्षा हो सके। **कुमार एवं श्रीवास्तव** (2001) ने मानव जाति के नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों के हनन में भ्रष्टाचार को एक उपकरण माना है।

भारत पर भी मानवाधिकार हनन की बात का आरोप आए दिन लगाया जा रहा है। यह आरोप विशेषकर कश्मीर, पंजाब तथा असम आदि में सुरक्षाबलों द्वारा नागरिकों पर अत्याचार से संबंध्ति है। । Amnesty International आदि मानवाधिकार संगठनों द्वारा इस तरह के आरोप आए दिन भारत के उपर बराबर लगाये जाते रहे हैं। ये एजेन्सियां इस बात पर ध्यान नहीं देती कि आतंकवादी किस तरह से मानवाधिकारों का उल्लंघन कर रहे हैं फिर भारत पर एक आरोप यह भी है कि यहाँ अनु. जाति/अनु. जनजाति को समुचित न्याय नहीं मिल रहा है तथा इनके साथ अत्याचार हो रहा है। स्त्रियों पर हो रहे दहेज हेतु अत्याचार, पुलिस हिरासतों में बढ़ती मौत आदि भी वास्तव में चिन्ता का विषय है। निःसन्देह यह सब भारत का आन्तरिक मामला है परन्तु ठीक नहीं होने पर इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। यह एक गंभीर चिन्ता का विषय है। वास्तव में भारत को चाहिए कि वह अपने आन्तरिक स्थिति को पूरी तौर पर सुदृढ़ करे तथा अपने ऊपर लगने वाले तमाम आरोपों का करारा जबाव दे तथा एमनेस्टी जैसे मानवाधिकार संगठनों को जाँच करने दें। वास्तव में भारत के संदर्भ में बीते 67 वर्षों के अन्तराल का ईमानदारी पूर्वक विश्लेषण करने से यह बात तो एकदम स्पष्ट है कि भारत में मानवाधिकारों की अवहेलना हुई हैं पर अत्याचार, स्त्रियों पर अत्याचार, जेल में कैदियों की मृत्यु, पुलिस यातना आदि मामले काफी मात्रा में पाये गये। इसके अलावे अल्पसंख्यक भी अपनी स्थिति से नाखुश है और प्रशासन बार–बार ऐसी गलतियाँ करता रहा हैं ऐसे उठने वाले तमाम समस्याओं पर काबू पाने हेतु बेहद आवश्यक कदम उठाये जाने की आवश्यकता है तथा यह भी जरूरी है कि उसमें सम्पूर्ण जनता भागीदार हों।

विगत वर्षों में भारत के ऊपर मानवाधिकार हनन संबंधी लगने वाले आरोपों तथा वास्तव में इस संदर्भ में व्याप्त समस्याओं के निदान हेतु कुछ ठोस आवश्यक उपाय है–

(1) प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा को व्यवहारिक रूप में अनिवार्य बनाया गया

(2) पिछड़े क्षेत्रों का आर्थिक तथा सामाजिक विकास पर ध्यान दिया गया।

(3) क्षेत्रीय असमानता का निदान ढूंढा जाय।

(4) न्यायिक प्रक्रिया को चुस्त–दुरूस्त बनाया जाए।

(5) नीति–निर्माण में जनता की भागीदारी को सुनिश्चित किया जाय इत्यादि।

इन सब उपायों पर गंभीरता से ध्यान देने के उपरांत राष्ट्र के तमाम जनता को समुचित रूप से एकजुटता की भावना से जोड़ा जा सकेगा तथा मानवाधिकारी से जुड़े उठने वाले तमाम समस्याओं पर अवश्य ही नियंत्रण किया जा सकेगा।

29 सितम्बर, 1993 को भारत सरकार को एक अध्यादेश जिसके तहत् भारत में ''राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग'' का गठन किया गया वह वास्तव में मानवाधिकार संबंधी समस्याओं के निदान की दिशा में उठाया गया एक गंभीर प्रयास है। इस आयोग के प्रथम अध्यक्ष के रूप में भारत में उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायधीश रंगनाथ मिश्र को नियुक्त किया गया। यह आयोग वर्तमान समय में बेहतर कार्य कर रहे हैं जिससे आम जन–मानस अपने आपको काफी सुरक्षित महसूस कर रहे हैं। इस आयोग के माध्यम से भारत सरकार मानवाधिकार के ठेकेदारों को यह बतलाना चाहती है कि वह अपने नागरिकों के अधिकारों की हिफाजत हेतु पूरी तौर से सचेष्ट ही नहीं बल्कि सक्ष्म भी है। सरकार द्वारा उठाया गया यह कदम निश्चित तौर पर एक सार्थक प्रयास है लेकिन यह भी स्मरण होना चाहिए कि जिस देश में भ्रष्टाचार जड़ों में समाया हुआ हो, तथा देश की न्याय–प्रक्रिया पूरी तौर पर विफल साबित हो रही हो वहाँ पर एक आयोग गठित कर देने मात्रा से इन तमाम समस्याओं के दूर हो जाने की गलतफहमी नहीं पालनी चाहिए। बल्कि एक सकारात्मक प्रयास भर माननी चाहिए। मानवाधिकारों के रक्षा के लिए हमारे देश में पहले से ही पर्याप्त कानून उपलब्ध है जैसे अनुच्छेद– 32/226 के अनुसार सुप्रीम कोर्ट तथा हाई कोर्ट संविधान के भाग 3 में दिये गये मूल अधिकारों को लागू करवाने के लिए बाध्य है। केवल जरूरी इस बात की है कि इच्छाशक्ति तथा स्वच्छ मानसिकता से न्याय व्यवस्था एवं पुलिस पदाधिकारी अथवा प्रशासनिक पद्धति में अपेक्षित सुधार की ताकि कानूनों को दृढ़ता के साथ अमल में लाया जाय। वास्तव में जबतक इनके द्वारा कानूनों को पूरी तौर पर अमल में लाया नहीं जायेगा तब तक ऐसे मानवाधिकार आयोग के गठन मात्रा से कुछ हासिल कर पाना संभव नहीं है।

निष्कर्ष

स्पष्ट यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के गठन के माध्यम से भारत अपने यहाँ व्याप्त मानवाधिकार के हनन संबंधी समस्याओं पर बखूबी नियंत्रण पर बाहरी शक्तियों को करारा जबाव देने में सक्षम अवश्य हुए हैं। लेकिन हाँ यह भी सत्य है कि यह नया आयोग मानवाधिकार हनन की तस्वीर जरूर पेश करता है जो सरकारी बयानों की तुलना में वस्तुतः ज्यादा विश्वसनीय मानी जायेगी। इसलिए यह जरूरी है कि इन गलतपफहमी को दूर करने हेतु तथा महाशक्तियों के कोपभाजन से बचाने हेतु अन्य मानवाधिकार संगठनों के द्वारा अपने देश के निरीक्षण में गुरेज नहीं किया जाय। इसके लिए सबसे पहले जरूरी इस बात की है कि अपने अंदर हम खुद मजबूत हों क्योंकि ये तमाम बातें भारत का आंतरिक मामला है और आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का हक किसी राष्ट्र को कदापि नहीं है। यह मुद्दा वास्तव में अपने देश के मान–सम्मान, सुरक्षा, राष्ट्रहित से जुड़ा अहम मुद्दा है जिस पर गंभीरतापूर्वक सकारात्मक सोच एवं ईमानदारी पूर्वक एक निश्चित कार्यनीति अपनायी जानी चाहिए। अतः मानवाधिकार एक गंभीर एवं अहम विषय राष्ट्रहित में हैं।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य की जब हम बात करते हैं तो आज मानवाधिकार की अवधारणा महत्वपूर्ण हो गई है। मानवाधिकार आंदोलन की उपादेयता तभी है, जब समाज के सभी नागरिकों को मानव अधिकार उपलब्ध हों। मानव अधिकार का मूल मकसद (अवधारणा) यह होना चाहिए कि समाज से सभी प्रकार के भेदभाव का अंत हो। वर्तमान राजनीतिक तंत्र राष्ट्रीय लक्ष्य को प्राप्त करने में सक्षम नहीं हो पा रहा है। भारत के संदर्भ में जिन मूल्यों के आधार पर स्वतंत्रता आंदोलन चलाया गया, उसकी अत्यंत आवश्यकता है। वे

मूल्य विश्लेषण और विकास के लिए उचित ढ़ांचा प्रदान करते हैं। वर्तमान में पाश्चात्य विचारों के समागम से मानव चेतना को झकझोर दिया है। भारत ने सभी उत्तम विचारों को विवेकपूर्ण दृष्टि से स्वीकार करते हुए एक राजनीतिक तंत्र विकसित किया है और संविधान निर्माता यह महसूस करते थे कि बुनियादी मानवाधिकार के बिना प्राप्त की गई स्वतंत्रता बेमानी है। इसलिये भारतीय संविधन में मानवाधिकारों को वैधनिक दर्जा प्रदान किया गया।हाल के वर्षों में मानवाधिकार के सबसे अधिक मामले महिलाओं से संबंधित हैं, क्योंकि वर्तमान में भारतीय महिलायें समाज एवं राज्य की विभिन्न गतिविधियों में पर्याप्त सहभागिता कर रही हैं। सन् 1997–98 की रिपोर्ट देखने पर यह स्पष्ट होता है कि देश भर के 28 राज्यों में मानवाधिकार उल्लंघन के कुल 35779 शिकायतें प्राप्त हुई हैं जिसमें 17453 सिर्फ उत्तर प्रदेश के हैं। राष्ट्रीय महिला आयोग के अनुसार उत्तर प्रदेश में महिला उत्पीड़न के कुल 18929 मामले दर्ज हुए जो देश में महिलाओं से जुड़े अपराधों का 13.4 प्रतिशत है। मानवाधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा ने भेदभाव को ना करने की सिद्धांत की पुष्टि की थी और घोषित किया था कि सभी मानव स्वतंत्र पैदा हुए हैं और गरिमा एवं अधिकारों में समान हैं तथा सभी व्यक्ति बिना किसी भेदभाव के अधिकारों एवं स्वतंत्रता के हकदार हैं। इसलिए इन अधिकारों को प्रोत्साहित करने के लिए तथा भविष्य में इसके उल्लंघन को रोकने के लिए यह नितांत आवश्यक है कि अंतराष्ट्रीय विधि प्रणाली को और भी अधिक प्रभावी बनाया जाय, नहीं तो केवल आदेश और निर्देश जारी कर देने से देश भर में कुछ सुधरने होनेवाला नहीं है, जब तक मानवाधिकार के मुख्य नियम एवं लोगों में जागरूकता संबंधी निर्देशों के पालन की दिशा में हम सचेष्ट नहीं होंगे तब तक शोषण का यह सिलसिला चलता रहेगा और यों ही सूली पर यह अधिकार लटका रहेगा।

संदर्भ

हन्फी, एम (2014), *"स्त्री शिक्षा"*, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर प्रकाशन, पृ025–27

कुमार अशोक (2007), *"उपकार राजनीति विज्ञान"*, आगरा, उपकार प्रकाशन, पृ0 30–31

गाबा, ओम प्रकाश (2003), *"राजनीति चिंतन की रूपरेखा"* नोएडा, मयूर बैक्स, पृ0399–400

शर्मा, डॉ0 प्रभुदत्त (2000), *"अंतरराष्ट्रीय संबंध"* जयपुर, कॉलेज बुक डिपो, पृ040

Henkin, Louis (1987), "The international bill of right CD Publishing" page no 107-108

अग्रवाल, सुशील (2008), *"नारी की स्थिति"*, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा पृ0 95–98